Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2
ISSN No: 3049-4176

चरित्र, कथानक और सिनेमा: हिंदी साहित्य आधारित फिल्मों में वैचारिक रूपान्तरण का अध्ययन

सीमा मामोडिया
शोधार्थी, हिंदी विभाग, अपेक्स विश्विद्यालय,जयपुर
mananseema123@gmail.com
डॉ. वंदना गजराज
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, अपेक्स विश्विद्यालय,जयपुर
Mail : vandanagajraj1074@gmail.com

DOI: https://doi.org/10.65578/kavyasetu.v2.i9.368

सारांश
हिंदी साहित्य और भारतीय सिनेमा के मध्य संबंध सौ वर्षों से भी अधिक पुराना है, और इस दीर्घ यात्रा में अनेक उपन्यास, कहानियाँ तथा आत्मकथात्मक कृतियाँ पर्दे पर रूपांतरित होकर नए अर्थ ग्रहण करती रही हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र इस मान्यता से आरंभ होता है कि साहित्य से सिनेमा की ओर होने वाला रूपांतरण मात्र माध्यम-परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह एक वैचारिक प्रक्रिया भी है जिसमें चरित्र-चित्रण और कथानक दोनों ही बाजार, दर्शक-रुचि, सेंसर-मानदंडों तथा प्रभुत्वशाली सामाजिक मूल्यों के अनुरूप ढाले जाते हैं। गोदान, देवदास, गाइड, पिंजर और उमराव जान जैसी फिल्मों को केंद्र में रखकर यह अध्ययन दिखाता है कि किस प्रकार मूल कृतियों के स्त्री-चरित्र, वर्ग-चेतना और सामाजिक आलोचना को व्यावसायिक सिनेमा की परंपराओं के अनुरूप शमित, रोमानीकृत अथवा पुनर्संरचित किया जाता है। समकालीन उदाहरण के रूप में 12th फेल पर भी विचार किया गया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि रूपांतरण की यह प्रवृत्ति समकालीन युवा-दर्शक की रुचि के अनुरूप निरंतर परिवर्तित होती रहती है। गुणात्मक तथा तुलनात्मक पाठ-विश्लेषण पद्धति का प्रयोग करते हुए यह शोध-पत्र लिंडा हचन के रूपांतरण-सिद्धांत तथा अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद की अवधारणा के आधार पर यह प्रतिपादित करता है कि साहित्य से सिनेमा में होने वाला परिवर्तन तकनीकी सीमाओं से अधिक वैचारिक चयन का परिणाम है।

मुख्य शब्द - हिंदी साहित्य, सिनेमा, रूपांतरण, चरित्र-चित्रण, कथानक, वैचारिकता, स्त्री-विमर्श,

1 प्रस्तावना

भारतीय सिनेमा और हिंदी साहित्य के मध्य संबंध की शुरुआत को यदि ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो यह सन् 1913 तक पहुँचती है, जब दादासाहेब फाल्के द्वारा निर्देशित राजा हरिश्चंद्र भारत की पहली मूक फिल्म के रूप में प्रदर्शित हुई और उसी वर्ष रवीन्द्रनाथ टैगोर को गीतांजलि के लिए नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ (साक्षी और पाठक)। इस संयोग में यह संकेत निहित है कि जिस समय भारतीय साहित्य विश्व-

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

पटल पर अपनी प्रतिष्ठा स्थापित कर रहा था, उसी समय सिनेमा भी साहित्य के सहारे अपनी जमीन तलाश रहा था। तब से लेकर आज तक हिंदी की अनेक महत्वपूर्ण कृतियाँ पर्दे पर उतरी हैं — गोदान, गबन, चित्रलेखा, सूरज का सातवाँ घोड़ा, काशी का अस्सी जैसी रचनाएँ इसके प्रमाण हैं। परंतु यह प्रक्रिया कभी भी एक-से-एक अनुवाद की तरह सरल नहीं रही; उपन्यास अथवा कहानी का कथ्य जब दृश्य-माध्यम में प्रवेश करता है तो वह अनिवार्यतः बदलता है, क्योंकि सिनेमा शब्दों के स्थान पर बिंब, संगीत, अभिनय और सीमित समय-अवधि में अपनी बात कहता है।

प्रस्तुत अध्ययन का केंद्रीय प्रश्न यह है कि यह परिवर्तन केवल तकनीकी अनिवार्यता है, या इसके पीछे कोई वैचारिक चयन भी सक्रिय रहता है। जब कोई फिल्मकार किसी उपन्यास की विधवा नायिका को अविवाहित दिखा देता है, अथवा किसी तवायफ़ के आत्म-कथन को रूमानी प्रेम-कथा में बदल देता है, तो यह परिवर्तन केवल माध्यम की सीमा से उत्पन्न नहीं होता — इसमें दर्शक-वर्ग की स्वीकृति, बाजार की मांग, सेंसर-व्यवस्था और प्रचलित सामाजिक मूल्य-बोध की भूमिका भी होती है। इसी दृष्टि से यह शोध-पत्र चरित्र-चित्रण और कथानक दोनों स्तरों पर होने वाले रूपांतरण की पड़ताल करता है, ताकि यह समझा जा सके कि हिंदी साहित्य आधारित फिल्में समाज के किन मूल्यों को आगे बढ़ाती हैं और किन्हें पीछे छोड़ देती हैं।

यह अध्ययन विशेष रूप से उन कृतियों पर केंद्रित है जिनमें स्त्री-चरित्र, वर्ग-संबंध अथवा सामाजिक असमानता का प्रश्न प्रमुखता से उठाया गया था, क्योंकि इन्हीं बिंदुओं पर रूपांतरण के समय सर्वाधिक वैचारिक हस्तक्षेप देखा जाता है। साथ ही, समकालीन उदाहरण के रूप में 12th फेल को भी सम्मिलित किया गया है, जिससे यह प्रमाणित होता है कि रूपांतरण की यह प्रवृत्ति किसी एक युग तक सीमित नहीं, बल्कि आज भी सक्रिय है और दर्शक-रुचि के साथ निरंतर अपना स्वरूप बदलती रहती है।

2 साहित्य समीक्षा

रूपांतरण-अध्ययन (Adaptation Studies) के क्षेत्र में लिंडा हचन का कार्य आधारभूत माना जाता है। हचन के अनुसार रूपांतरण को केवल मूल कृति के प्रति निष्ठा (fidelity) के मानदंड से नहीं परखा जाना चाहिए, बल्कि इसे एक स्वतंत्र सृजनात्मक तथा व्याख्यात्मक प्रक्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए, जो पुनरावृत्ति के साथ भिन्नता (repetition with variation) पर आधारित होती है (Hutcheon)। उनका यह तर्क कि सिनेमा शब्दों के बजाय बिंबों में अपनी बात कहता है और इसलिए जटिलता, विडंबना अथवा आंतरिक एकालाप को दृश्य-रूप में बदलना पड़ता है, इस शोध-पत्र के सैद्धांतिक आधार के रूप में उपयोग किया गया है। भारतीय संदर्भ में हाइडी पाउवेल्स ने अपनी पुस्तक इंडियन लिटरेचर एंड पॉपुलर सिनेमा: रीकास्टिंग क्लासिक्स में यह दिखाया है कि हिंदी सिनेमा साहित्यिक विषयों को किस प्रकार व्यापक दर्शक-वर्ग के अनुकूल पुनर्रचित करता है (पॉवेल्स, हाइडी)।

प्रेमचंद की रचनाओं के फिल्म-रूपांतरण पर संध्या का अध्ययन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसमें मराल्ड बैरेट के इस मत का उल्लेख किया गया है कि रूपांतरण कभी भी पूर्णतः शब्दानुवाद या भावानुवाद नहीं होता, बल्कि वह अनुकरण और स्वतंत्र पुनर्रचना के बीच कहीं ठहरता है, और इस प्रक्रिया में अभिवर्धन, अध्याहरण तथा परिवर्तन — ये तीन प्रविधियाँ कार्य करती हैं। संध्या के अनुसार

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

गोदान के फिल्म-रूपांतरण में निर्देशक ने अपेक्षाकृत कम परिवर्तन किए, परंतु जो परिवर्तन हुए वे गहरे अर्थ रखते हैं — जैसे झुनिया को उपन्यास में विधवा दिखाया गया है जबकि फिल्म में उसे अविवाहित युवती के रूप में प्रस्तुत किया गया, जो सामाजिक स्वीकार्यता की दृष्टि से किया गया एक सायास परिवर्तन प्रतीत होता है (संध्या)। इसी दिशा में एक अन्य अध्ययन ने गोदान उपन्यास और उसके 1963 के फिल्म-रूपांतरण की तुलना करते हुए यह स्पष्ट किया कि फिल्म पूर्व-स्वातंत्र्य कालीन उपन्यास के ग्रामीण शोषण और वर्ग-संघर्ष के तीखे यथार्थ को स्वातंत्र्योत्तर भारत के अपेक्षाकृत आश्वस्तिपूर्ण परिवेश में किस प्रकार छिपाती और किस प्रकार दोहराती है (गोदान)।

अमृता प्रीतम के उपन्यास पर आधारित फिल्म पिंजर पर हुए अध्ययन इस बात की पुष्टि करते हैं कि विभाजन-कालीन स्त्री-यातना के चित्रण में फिल्म ने उपन्यास के मूल विषय को बनाए रखने का प्रयास किया, परंतु जटिल आख्यान-संरचना को सरल तथा रैखिक बनाने के लिए उसे इंटरसेमियोटिक अनुवाद की प्रविधियों से गुजरना पड़ा । इसी शोध-परंपरा में एक अन्य अध्ययन ने यह विश्लेषित किया कि पूरो के हामिदा में बदल जाने की यातना को फिल्म ने किस प्रकार दृश्य-प्रतीकों और मौन के माध्यम से व्यक्त किया, जबकि उपन्यास में यही यातना कथावाचक की आंतरिक चेतना के स्तर पर प्रकट होती है । आर. के. नारायण के उपन्यास द गाइड और उस पर आधारित हिंदी फिल्म गाइड की तुलना करने वाले अध्ययन ने यह रेखांकित किया कि विजय आनंद ने राजू के बचपन से संबंधित संपूर्ण आख्यान को हटा दिया तथा रोज़ी के चरित्र को अधिक नाटकीय एवं दृश्यात्मक रूप में प्रस्तुत किया, जबकि उपन्यास व्यक्ति-केंद्रित सूक्ष्म मनोविश्लेषण पर आधारित है ।

भारतीय सिनेमा में साहित्यिक कृतियों के रूपांतरण की व्यापक परंपरा पर मनोज कुमार भट्ट के अध्ययन ने यह दिखाया कि रामायण-महाभारत जैसी कथाओं से लेकर विलियम शेक्सपियर की रचनाओं तक — जैसे मैकबेथ पर आधारित मकबूल और ओथेलो पर आधारित ओमकारा — भारतीय सिनेमा ने निरंतर साहित्य को नए दर्शक-वर्ग तक पहुँचाने का कार्य किया है, परंतु इसमें साहित्यिक तत्वों को यथासंभव बनाए रखना आवश्यक माना गया है ताकि कथ्य का केंद्रीय आशय सुरक्षित रह सके (भट्ट)। समकालीन कृतियों के संदर्भ में साक्षी और उषा पाठक के अध्ययन ने अनुराग पाठक के आत्मकथात्मक उपन्यास पर आधारित फिल्म 12th फेल को केंद्र में रखते हुए यह उल्लेख किया है कि पटकथा-लेखक नीलय उपाध्याय के अनुसार फिल्मी लेखन में होने वाला परिवर्तन दर्शक-रुचि के परिवर्तन का प्रत्यक्ष परिणाम है, और आज के फिल्मकार युवा दर्शक-वर्ग को ध्यान में रखकर कथ्य को ढालते हैं, जबकि साहित्यकार अपनी रचना में इस प्रकार के बाह्य दबाव से अपेक्षाकृत स्वतंत्र रहता है (साक्षी और पाठक)। इन समस्त अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि रूपांतरण पर हुआ अधिकांश कार्य किसी एक कृति की तुलनात्मक व्याख्या तक सीमित रहा है; चरित्र, कथानक और वैचारिकता — तीनों स्तरों को एक साथ जोड़कर बहु-कृतीय तुलनात्मक दृष्टि से देखने का प्रयास अपेक्षाकृत कम हुआ है, और यही रिक्तता प्रस्तुत शोध-पत्र को औचित्य प्रदान करती है।

3 अध्ययन के उद्देश्य, परिकल्पनाएँ एवं महत्व

उपर्युक्त साहित्य समीक्षा से उभरी रिक्तताओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध-पत्र के तीन उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं। प्रथम उद्देश्य हिंदी साहित्य पर आधारित चयनित फिल्मों में मूल कृतियों के चरित्र-चित्रण में हुए रूपांतरण का विश्लेषण करना है। द्वितीय उद्देश्य इन्हीं कृतियों की कथावस्तु अथवा कथानक में सिनेमाई रूपांतरण के दौरान हुए संरचनात्मक परिवर्तनों की पहचान करना है। तृतीय एवं केंद्रीय उद्देश्य इन दोनों प्रकार के रूपांतरणों के पीछे सक्रिय वैचारिक — अर्थात सामाजिक, सांस्कृतिक तथा लैंगिक — कारकों तथा उनके प्रभावों का विवेचन करना है।

इन उद्देश्यों के समानांतर तीन शोध-परिकल्पनाएँ प्रस्तावित की गई हैं। पहली परिकल्पना यह है कि हिंदी साहित्य पर आधारित फिल्मों में मूल चरित्रों को व्यावसायिक सिनेमा की लोकप्रिय अपेक्षाओं के अनुरूप सरलीकृत तथा रूपांतरित किया जाता है, विशेषतः स्त्री-चरित्रों के मामले में। दूसरी परिकल्पना यह है कि फिल्म-रूपांतरण की प्रक्रिया में मूल कथानक को दृश्य-माध्यम की समय-सीमा और दर्शक-वर्ग की रुचि के अनुसार संक्षिप्त, रैखिक तथा परिवर्तित किया जाता है। तीसरी परिकल्पना यह है कि साहित्य से सिनेमा में होने वाला यह रूपांतरण मात्र तकनीकी अनिवार्यता न होकर वैचारिक चयन का परिणाम है, जो प्रचलित सामाजिक मूल्यों, स्त्री-प्रतिनिधित्व की परंपराओं तथा सत्ता-संरचनाओं को पुनर्परिभाषित करता है।

इस अध्ययन का महत्व इस तथ्य में निहित है कि सिनेमा आज भी भारत में साहित्य की तुलना में कहीं अधिक व्यापक दर्शक-वर्ग तक पहुँचता है, और इसलिए कोई भी उपन्यास अथवा कहानी जब पर्दे पर उतरती है तो जनसामान्य के लिए वही रूपांतरित पाठ मूल कृति का स्थान ले लेता है। ऐसी स्थिति में यदि रूपांतरण की प्रक्रिया में मूल कृति की सामाजिक आलोचना, स्त्री-स्वर अथवा वर्ग-चेतना को शमित कर दिया जाता है, तो इसका सीधा प्रभाव जनसामान्य की सामाजिक-सांस्कृतिक समझ पर पड़ता है। भट्ट के अनुसार साहित्यिक कृतियों के सिनेमाई रूपांतरण सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण और क्लासिक कृतियों के पुनर्पाठ का प्रभावी माध्यम बन सकते हैं, बशर्ते रूपांतरण में साहित्यिक तत्वों तथा कथ्य के केंद्रीय आशय को सुरक्षित रखा जाए (भट्ट)। इस दृष्टि से यह अध्ययन न केवल साहित्य और सिनेमा के अंतर्संबंध को समझने में सहायक है, बल्कि भविष्य के फिल्मकारों तथा पाठकों-दर्शकों दोनों के लिए यह विवेकपूर्ण दृष्टि भी प्रदान करता है कि रूपांतरण को किस सजगता के साथ देखा और रचा जाना चाहिए।

4 शोध विधि

प्रस्तुत शोध-पत्र गुणात्मक शोध पद्धति (Qualitative Research Method) पर आधारित है, जिसमें तुलनात्मक पाठ-विश्लेषण (Comparative Textual Analysis) तथा वर्णनात्मक-विश्लेषणात्मक (Descriptive-Analytical) दृष्टिकोण का समन्वित प्रयोग किया गया है। भट्ट के अध्ययन में भी साहित्यिक कृतियों के सिनेमाई रूपांतरण को समझने के लिए इसी प्रकार की सामग्री-विश्लेषण (Content Analysis) पद्धति अपनाई गई थी, जिसे इस शोध-पत्र में केस-स्टडी दृष्टिकोण के साथ विस्तारित किया गया है (भट्ट)। अध्ययन हेतु मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है, जिनमें

चयनित उपन्यास/कहानी के मूल पाठ, संबंधित फिल्मों की पटकथा एवं दृश्य-संरचना संबंधी विवरण, तथा रूपांतरण-अध्ययन के क्षेत्र में प्रकाशित शोध-पत्र एवं आलोचनात्मक ग्रंथ सम्मिलित हैं।

नमूना-चयन के लिए उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन (Purposive Sampling) की प्रविधि अपनाई गई है, जिसके अंतर्गत उन्हीं कृतियों को चुना गया जिनमें स्त्री-चरित्र, वर्ग-संबंध अथवा सामाजिक असमानता का प्रश्न केंद्रीय रूप से उपस्थित है — जैसे प्रेमचंद का गोदान, शरतचंद्र चट्टोपाध्याय का देवदास, आर. के. नारायण का द गाइड, अमृता प्रीतम का पिंजर, मिर्ज़ा हादी रुसवा का उमराव जान अदा तथा समकालीन संदर्भ हेतु अनुराग पाठक की आत्मकथात्मक कृति पर आधारित 12th फेल। इन कृतियों तथा इनके फिल्म-रूपांतरणों का विश्लेषण तीन स्तरों पर किया गया है — चरित्र-चित्रण, कथानक-संरचना तथा वैचारिक अंतर्वस्तु — और विश्लेषण की प्रक्रिया में लिंडा हचन के रूपांतरण-सिद्धांत तथा इंटरसेमियोटिक अनुवाद की अवधारणा को व्याख्यात्मक उपकरण के रूप में प्रयुक्त किया गया है, हचियन (2013) ।

5 सैद्धांतिक आधार

इस शोध-पत्र का सैद्धांतिक आधार मुख्यतः लिंडा हचन के रूपांतरण-सिद्धांत पर टिका है। हचन रूपांतरण को तीन परस्पर-संबद्ध दृष्टियों से परिभाषित करती हैं — एक औपचारिक उत्पाद (formal product) के रूप में, जिसमें माध्यम अथवा संदर्भ का परिवर्तन होता है; एक सृजन-प्रक्रिया (process of creation) के रूप में, जिसमें पुनर्व्याख्या और पुनर्रचना दोनों सम्मिलित हैं; तथा एक ग्रहण-प्रक्रिया (process of reception) के रूप में, जिसमें दर्शक मूल कृति की स्मृति के साथ अंतर्पाठीय संबंध स्थापित करता है (Hutcheon)। हचन का यह तर्क विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि रूपांतरण को निष्ठा (fidelity) के मानदंड से नहीं, बल्कि पुनरावृत्ति के साथ भिन्नता के रूप में देखा जाना चाहिए — अर्थात प्रत्येक रूपांतरण अपने संदर्भ, समय और दर्शक-वर्ग के अनुरूप मूल कथा का पुनर्निर्माण करता है, न कि उसकी यथावत प्रतिकृति प्रस्तुत करता है।

इसके समांतर, टेलिंग (कथन) से शोइंग (प्रदर्शन) की ओर होने वाले संक्रमण की अवधारणा भी इस अध्ययन के लिए उपयोगी सिद्ध होती है। हचन के अनुसार उपन्यास का वर्णन, आंतरिक एकालाप तथा विडंबना जैसे तत्व जब दृश्य-माध्यम में प्रवेश करते हैं तो उन्हें संवाद, अभिनय, ध्वनि और दृश्य-बिंब के रूप में पुनर्लिखित करना पड़ता है, और इस प्रक्रिया में पात्रों के मध्य के वैचारिक द्वंद्व को भी दृश्य-रूप में मूर्त करना आवश्यक हो जाता है (Hutcheon)। इसी सिद्धांत को हिंदी आलोचना में मराल्ड बैरेट के संदर्भ से जोड़ते हुए संध्या ने अभिवर्धन, अध्याहरण और परिवर्तन — इन तीन प्रविधियों का उल्लेख किया है, जो इंटरसेमियोटिक अनुवाद की प्रक्रिया में कार्य करती हैं (संध्या)। अभिवर्धन के अंतर्गत फिल्मकार मूल कथा में नए दृश्य, गीत अथवा प्रसंग जोड़ता है; अध्याहरण के अंतर्गत मूल कथा के जटिल अथवा असुविधाजनक अंशों को छोड़ दिया जाता है; और परिवर्तन के अंतर्गत मूल कथा के किसी तत्व को उसके मूल रूप से भिन्न, अधिकांशतः अधिक स्वीकार्य रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह त्रिविध प्रविधि इस शोध-पत्र के विश्लेषण-खंड में चरित्र और कथानक दोनों के अध्ययन हेतु सैद्धांतिक कसौटी के रूप में प्रयुक्त की गई है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

6 विश्लेषण एवं विवेचन: चरित्र-चित्रण में रूपान्तरण

प्रेमचंद के उपन्यास गोदान (1936) में झुनिया एक विधवा स्त्री है, जिसका विधवापन उस सामाजिक व्यवस्था की कठोरता को उजागर करता है जिसमें विधवा स्त्री की देह और इच्छा दोनों को समाज द्वारा अस्वीकृत कर दिया जाता है। परंतु 1963 में बनी फिल्म गोदान में झुनिया को विधवा न दिखाकर एक अविवाहित युवती के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिससे गोबर और झुनिया के संबंध को दर्शक-वर्ग के लिए अधिक स्वीकार्य बना दिया गया, परंतु इसके साथ ही उपन्यास की वह गहन सामाजिक आलोचना भी क्षीण हो गई जो विधवा-पुनर्विवाह के निषेध और स्त्री-देह पर समाज के नियंत्रण को उजागर करती थी (संध्या)। यह परिवर्तन प्रत्यक्षतः एक छोटा-सा कथानक-परिवर्तन प्रतीत होता है, परंतु वास्तव में यह चरित्र के वैचारिक भार को ही बदल देता है — विधवा झुनिया का संघर्ष जिस सामाजिक निषेध से उत्पन्न होता है, अविवाहित झुनिया के संदर्भ में वह निषेध अनुपस्थित हो जाता है, और इस प्रकार फिल्म परोक्ष रूप से विधवा-प्रश्न की सामाजिक जटिलता से बच निकलती है।

शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के उपन्यास देवदास (1917) में पारो और चंद्रमुखी दोनों ही ऐसी स्त्रियाँ हैं जिनकी पीड़ा देवदास की आत्म-विनाशकारी उदासीनता से उत्पन्न होती है, और उपन्यास का स्वर अंततः विषादपूर्ण तथा संयत है। परंतु समय के साथ बने विभिन्न फिल्म-रूपांतरणों में — विशेषतः बाद के व्यावसायिक संस्करणों में — पारो और चंद्रमुखी के चरित्रों को दृश्यात्मक वैभव, नृत्य-प्रधान प्रस्तुति तथा भावनात्मक अतिरंजना के माध्यम से रूपांतरित किया गया, जिससे मूल उपन्यास का संयत विषाद अनेक बार भव्य दृश्य-वैभव में परिवर्तित हो जाता है। इससे चंद्रमुखी जैसी तवायफ़ चरित्र की सामाजिक स्थिति की आलोचनात्मक चेतना पृष्ठभूमि में चली जाती है और उसका चरित्र मुख्यतः दृश्य-सौंदर्य तथा त्याग की प्रतीक-मात्र में सिमट जाता है। यही प्रवृत्ति मिर्ज़ा हादी रुसवा के उर्दू उपन्यास उमराव जान अदा (1899) के फिल्म-रूपांतरणों में भी दिखाई देती है, जहाँ उपन्यास में उमराव जान स्वयं अपनी कथा की वाचिका है और अपने जीवन को विडंबना तथा आत्म-विश्लेषण की दृष्टि से देखती है, परंतु फिल्मी रूपांतरणों में यह आत्म-वाचिक विडंबना प्रायः एक रूमानी, संगीत-प्रधान प्रेम-कथा में बदल जाती है, जिससे तवायफ़ की सामाजिक-आर्थिक विवशता से जुड़ी आलोचनात्मक दृष्टि क्षीण पड़ जाती है।

आर. के. नारायण के उपन्यास द गाइड (1958) में राजू का चरित्र बचपन से लेकर वयस्क होने तक की संपूर्ण मनोवैज्ञानिक यात्रा में गढ़ा गया है, और रोज़ी का चरित्र भी उपन्यास में एक जटिल, आत्म-निर्भर नर्तकी के रूप में विकसित होता है जो अपने पति मार्को की उपेक्षा से मुक्त होकर स्वतंत्र कलात्मक अस्मिता खोजती है। परंतु 1965 की फिल्म गाइड में विजय आनंद ने राजू के बचपन से जुड़े संपूर्ण आख्यान को हटाकर कथा को सीधे उसके वयस्क जीवन से आरंभ किया, जिससे राजू का चरित्र-विकास कहीं अधिक संक्षिप्त तथा नाटकीय हो गया, और रोज़ी के चरित्र को भी अधिक दृश्यात्मक, नृत्य-केंद्रित रूप में प्रस्तुत किया गया । इसी प्रकार अमृता प्रीतम के उपन्यास पिंजर (1950) की पूरो, जो विभाजन की हिंसा में अपहृत होकर हामिदा बनने को विवश होती है, उपन्यास में अपनी पीड़ा को एक जटिल आंतरिक द्वंद्व के रूप में अनुभव करती है, जबकि 2003 की फिल्म पिंजर में इस आंतरिक द्वंद्व को दृश्य-

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

प्रतीकों, संगीत तथा बाह्य क्रिया-व्यापार के माध्यम से बाहरी रूप में व्यक्त करना आवश्यक हो जाता है, जिससे चरित्र की मौन-वेदना कुछ हद तक मुखर वेदना में बदल जाती है ।

7 विश्लेषण एवं विवेचन: कथानक में रूपान्तरण

कथानक के स्तर पर देखा जाए तो साहित्य से सिनेमा की ओर होने वाला रूपांतरण मुख्यतः तीन प्रविधियों से गुजरता है — संक्षेपण, अभिवर्धन तथा अंत-परिवर्तन। गाइड के फिल्म-रूपांतरण में विजय आनंद ने न केवल राजू के बचपन को हटाया, बल्कि उपन्यास की जटिल कालक्रम-संरचना — जिसमें वर्तमान और भूत की कथाएँ परस्पर गुँथी हुई हैं — को भी अपेक्षाकृत रैखिक बना दिया, जिससे दर्शक के लिए कथा को अनुसरण करना सरल हो गया, परंतु उपन्यास की वह बहुस्तरीय विडंबना क्षीण पड़ गई जो कथावाचक की स्मृति और वर्तमान के मध्य उत्पन्न होती है ("A Comparative Analysis")। इसके साथ ही, उपन्यास का अंत जहाँ राजू की भूख-हड़ताल के परिणाम को अनिश्चित तथा प्रतीकात्मक बनाए रखता है, फिल्म का अंत वर्षा के दृश्य-बिंब के माध्यम से कहीं अधिक आश्वस्तिपूर्ण तथा भावनात्मक रूप से सुसंगत बना दिया गया है, जिससे कथा एक अस्पष्ट नैतिक प्रश्न से एक स्पष्ट, दर्शक-संतोषजनक परिणति की ओर बढ़ जाती है।

गोदान के फिल्म-रूपांतरण में भी संक्षेपण की प्रविधि प्रमुख रूप से कार्य करती है। प्रेमचंद के उपन्यास में होरी के ग्रामीण जीवन के साथ-साथ शहरी मध्यवर्गीय पात्रों — मेहता, मालती, ओंकारनाथ आदि — की समानांतर कथा भी विस्तार से चलती है, जो ग्रामीण शोषण के साथ-साथ शहरी बौद्धिक वर्ग की नैतिक जटिलताओं को भी उजागर करती है। परंतु फिल्म में इस समानांतर शहरी कथा को अपेक्षाकृत संक्षिप्त तथा गौण बना दिया गया, जिससे कथानक का केंद्र होरी की व्यक्तिगत त्रासदी पर सिमट गया और उपन्यास की वह द्विस्तरीय सामाजिक आलोचना — जो ग्रामीण तथा शहरी दोनों वर्गों को एक साथ जाँचती है — फिल्म में अपेक्षाकृत एकपक्षीय हो गई ("गोदान, फ़िल्म"")। इसी प्रकार देवदास के विभिन्न फिल्म-रूपांतरणों में मूल उपन्यास के संयत, धीमी गति से चलने वाले शोक-आख्यान में गीत-नृत्य के दृश्यों का अभिवर्धन किया गया, जो व्यावसायिक सिनेमा की अपेक्षाओं के अनुरूप कथा को दृश्यात्मक रूप से समृद्ध तो बनाता है, परंतु मूल उपन्यास की मंथर, आत्मलीन शोक-चेतना को बाधित भी करता है।

समकालीन उदाहरण के रूप में 12th फेल का कथानक-रूपांतरण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह दिखाता है कि यह प्रवृत्ति आज भी सक्रिय है। साक्षी और उषा पाठक के अनुसार अनुराग पाठक की आत्मकथात्मक कृति में नायक के संघर्ष के साथ-साथ भ्रष्टाचार, गरीबी तथा सामाजिक-आर्थिक परिवेश के अनेक जटिल प्रसंग विस्तार से वर्णित हैं, परंतु फिल्म-रूपांतरण में पटकथा-लेखक नीलय उपाध्याय के शब्दों में, बदलाव दर्शकों की रुचि को देखते हुए आते हैं, और इसी कारण फिल्म ने नायक के संघर्ष तथा सफलता की रैखिक, प्रेरणादायी परिणति को अधिक प्रमुखता दी, जबकि जीवन की अनेक जटिल, अनिश्चित तथा अनसुलझी परिस्थितियों को अपेक्षाकृत गौण बना दिया गया (साक्षी और पाठक)। इससे यह स्पष्ट होता है कि कथानक-संक्षेपण और अंत-परिवर्तन की यह प्रवृत्ति केवल पुराने साहित्य तक

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

सीमित नहीं है, बल्कि समकालीन आत्मकथात्मक कृतियों के रूपांतरण में भी समान रूप से सक्रिय रहती है, विशेषतः जब लक्षित दर्शक-वर्ग युवा तथा आकांक्षा-प्रेरित हो।

8 विश्लेषण एवं विवेचन: वैचारिक रूपान्तरण के कारण एवं स्वरूप

उपर्युक्त चरित्र तथा कथानक संबंधी परिवर्तनों के पीछे सक्रिय वैचारिक कारकों की पड़ताल करने पर यह स्पष्ट होता है कि इनमें से अधिकांश परिवर्तन तीन प्रमुख स्रोतों से उत्पन्न होते हैं — व्यावसायिक सिनेमा की बाजार-संचालित संरचना, प्रचलित पितृसत्तात्मक-सामाजिक मूल्य-व्यवस्था, तथा दृश्य-माध्यम की प्रस्तुतीकरण-संबंधी अपेक्षाएँ। झुनिया के विधवा से अविवाहित युवती में परिवर्तित हो जाने की घटना इस बात का प्रमाण है कि फिल्म-निर्माता प्रायः उन सामाजिक प्रश्नों को शमित कर देते हैं जो दर्शक-वर्ग के लिए असुविधाजनक अथवा विवादास्पद हो सकते हैं, भले ही वे प्रश्न मूल कृति की आत्मा में केंद्रीय हों (संध्या)। यह प्रवृत्ति केवल गोदान तक सीमित नहीं है — देवदास और उमराव जान के फिल्म-रूपांतरणों में तवायफ़ चरित्रों को रूमानी त्याग की प्रतिमा में बदल देना भी इसी वैचारिक चयन का उदाहरण है, जिसमें स्त्री की सामाजिक-आर्थिक विवशता से उत्पन्न आलोचनात्मक स्वर को भावनात्मक सौंदर्यीकरण के पीछे छिपा दिया जाता है।

दूसरा महत्वपूर्ण कारक दृश्य-माध्यम की अपनी संरचनात्मक अपेक्षाएँ हैं। हचन के अनुसार सिनेमा को अपनी सीमित समय-अवधि में दर्शक का ध्यान बनाए रखना होता है, और इसीलिए उपन्यास की आंतरिक जटिलता, विडंबना तथा बहुस्तरीय कालक्रम को सरल, रैखिक तथा दृश्यात्मक रूप में बदलना अनिवार्य हो जाता है (Hutcheon)। गाइड में राजू के बचपन का लोप और पिंजर में पूरो की आंतरिक वेदना का दृश्य-प्रतीकों में रूपांतरण इसी संरचनात्मक अनिवार्यता से उत्पन्न होते हैं । परंतु यह ध्यान देने योग्य है कि यह तकनीकी अनिवार्यता भी वैचारिक रूप से निरपेक्ष नहीं होती — फिल्मकार यह चयन करता है कि किस जटिलता को सरल बनाया जाए और किसे नहीं, और यह चयन ही अंततः वैचारिक कार्य करता है। उदाहरण के लिए, गाइड के अंत में उपन्यास की नैतिक अनिश्चितता को दृश्य-आश्वस्ति में बदल देना दर्शाता है कि व्यावसायिक सिनेमा प्रायः अनिश्चितता और विडंबना की तुलना में स्पष्ट, संतोषजनक परिणति को प्राथमिकता देता है, जो एक विशिष्ट सांस्कृतिक-वैचारिक रुझान का परिचायक है।

तीसरा कारक दर्शक-वर्ग तथा बाजार की बदलती हुई रुचि है, जो समय के साथ रूपांतरण की प्रकृति को भी बदल देती है। 12th फेल के संदर्भ में साक्षी और उषा पाठक द्वारा उद्धृत नीलय उपाध्याय का यह कथन विशेष रूप से सूचक है कि आज फिल्में युवा दर्शक-वर्ग को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं, और साहित्यकार को इस प्रकार के बाह्य दबाव से गुजरना नहीं पड़ता क्योंकि वह अपनी मर्जी का मालिक होता है (साक्षी और पाठक)। यह टिप्पणी इस शोध-पत्र की तीसरी परिकल्पना की पुष्टि करती है — अर्थात रूपांतरण मात्र तकनीकी प्रक्रिया नहीं, बल्कि प्रत्येक युग के दर्शक-वर्ग की वैचारिक अपेक्षाओं के अनुरूप ढाला गया चयन है। भट्ट के अध्ययन में भी यह रेखांकित किया गया है कि सशक्त फिल्म-रूपांतरण वही माने जाते हैं जो साहित्यिक तत्वों को यथासंभव सुरक्षित रखते हुए भी दर्शक की आवश्यकताओं का सम्मान करते हैं, अर्थात मूल कृति की आलोचनात्मक चेतना और व्यावसायिक

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

स्वीकार्यता के मध्य संतुलन साधना ही रूपांतरण-कला की वास्तविक चुनौती है (भट्ट)। इस दृष्टि से शतरंज के खिलाड़ी जैसे अपवाद-स्वरूप उदाहरण भी उल्लेखनीय हैं, जहाँ सत्यजित रे ने प्रेमचंद की कहानी के औपनिवेशिक-आलोचनात्मक स्वर को बड़े पर्दे पर लगभग यथावत सुरक्षित रखा, जो यह प्रमाणित करता है कि वैचारिक शमन अनिवार्य नियम नहीं, बल्कि फिल्मकार के सचेत चयन का परिणाम है।

9 निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध-पत्र के प्रथम उद्देश्य के संदर्भ में यह स्पष्ट होता है कि हिंदी साहित्य पर आधारित फिल्मों में मूल कृतियों के चरित्र-चित्रण को प्रायः व्यावसायिक स्वीकार्यता और दृश्यात्मक आकर्षण की दृष्टि से रूपांतरित किया जाता है। गोदान की झुनिया का विधवा से अविवाहित युवती में बदल जाना, देवदास और उमराव जान की तवायफ़ चरित्रों का रूमानी सौंदर्यीकरण, तथा गाइड और पिंजर की नायिकाओं की आंतरिक जटिलता का दृश्य-प्रतीकों में सरलीकरण — ये सभी उदाहरण इस बात के प्रमाण हैं कि चरित्र-रूपांतरण की प्रक्रिया मूल कृति की सामाजिक आलोचना को शमित करने की दिशा में कार्य करती है, जिससे प्रथम परिकल्पना की पुष्टि होती है।

द्वितीय उद्देश्य से संबंधित निष्कर्ष यह दर्शाता है कि कथानक के स्तर पर संक्षेपण, अभिवर्धन तथा अंत-परिवर्तन की प्रविधियाँ सतत रूप से कार्य करती हैं। गाइड की रैखिक बनी हुई कालक्रम-संरचना, गोदान की गौण हुई शहरी समानांतर कथा, देवदास में जुड़े गीत-नृत्य के दृश्य, तथा 12th फेल में संघर्ष की जटिलता का सरल, प्रेरणादायी परिणति में बदल जाना — ये सभी इस बात की पुष्टि करते हैं कि दृश्य-माध्यम की समय-सीमा और दर्शक-रुचि के अनुरूप मूल कथानक को अनिवार्यतः पुनर्संरचित करना पड़ता है, जिससे द्वितीय परिकल्पना भी सत्यापित होती है। तृतीय एवं केंद्रीय उद्देश्य के संदर्भ में यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि चरित्र और कथानक दोनों स्तरों पर होने वाला यह रूपांतरण तकनीकी अनिवार्यता से कहीं अधिक वैचारिक चयन का परिणाम है। फिल्मकार जिन तत्वों को हटाता, जोड़ता अथवा बदलता है, उनका चुनाव प्रचलित सामाजिक मूल्य-व्यवस्था, पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण तथा बाजार की मांग से गहराई से प्रभावित होता है, जिससे तृतीय परिकल्पना की भी पुष्टि होती है — साहित्य से सिनेमा में होने वाला रूपांतरण सामाजिक मूल्यों, स्त्री-प्रतिनिधित्व तथा सत्ता-संरचनाओं को पुनर्परिभाषित करने वाली एक सक्रिय वैचारिक प्रक्रिया है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि हिंदी साहित्य आधारित फिल्में साहित्य और समाज के मध्य एक सेतु का कार्य तो करती हैं, परंतु यह सेतु कभी भी पारदर्शी अथवा निरपेक्ष नहीं होता — यह अपने समय के मूल्यों, पूर्वाग्रहों तथा बाजार की अपेक्षाओं से रंगा होता है। शतरंज के खिलाड़ी जैसे अपवाद यह भी दर्शाते हैं कि मूल कृति की आलोचनात्मक चेतना को सुरक्षित रखना असंभव नहीं, बल्कि फिल्मकार की सजग रचनात्मक इच्छा-शक्ति पर निर्भर करता है। इस दृष्टि से यह शोध-पत्र इस निष्कर्ष के साथ समाप्त होता है कि साहित्य से सिनेमा की ओर होने वाले किसी भी रूपांतरण का मूल्यांकन केवल निष्ठा के मानदंड से नहीं, बल्कि यह पूछकर किया जाना चाहिए कि रूपांतरण ने मूल कृति की सामाजिक-वैचारिक आलोचना को आगे बढ़ाया है, अथवा उसे व्यावसायिक स्वीकार्यता की भेंट चढ़ा दिया है। भविष्य के फिल्मकारों तथा साहित्य के पाठकों-दर्शकों दोनों के लिए यह सजगता आवश्यक है, ताकि साहित्य

और सिनेमा का यह संबंध केवल मनोरंजन का माध्यम न रहकर सामाजिक चेतना के विस्तार का माध्यम भी बन सके।

संदर्भ सूची

1. भट्ट, मनोज कुमार (मनोज लीला भट्ट), और सिसविजय सिंह राठौर। "भारतीय सिनेमा में साहित्यिक कृतियों के सिनेमैटिक प्रस्तुतिकरण की भूमिका और प्रभाव: विश्लेषणात्मक अध्ययन।" द एशियन थिंकर, 2026, https://theasianthinker.com/wp-content/uploads/2026/01/14.-भारतीय-सिनेमा-में-साहित्यिक-कृतियों-के-सिनेमैटिक-प्रस्तुतिकरण-की-भूमिका-और-प्रभाव.pdf.
2. साक्षी, और उषा पाठक। "हिन्दी उपन्यासों पर आधारित हिन्दी फिल्मों का अनुशीलन: 12th फेल उपन्यास के संदर्भ में।" इंटरनेशनल जर्नल फॉर मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च (IJFMR), खंड 7, अंक 4, जुलाई-अगस्त 2025, https://www.ijfmr.com/research-paper.php?id=51217.
3. संध्या। "प्रेमचंद के उपन्यास और उनका फिल्म रूपांतरण।" अपनी माटी, 30 सितंबर 2023, https://www.apnimaati.com/2023/09/blog-post_36.html.
4. "एडेप्टेशन एज़ इंटरसेमिओटिक ट्रांसलेशन।" जेटीआईआर, वॉल्यूम 9, अंक 4, 2022, https://www.jetir.org/papers/JETIR2204043.pdf।
5. "एन एनालिसिस ऑफ़ द फ़िल्म एडेप्टेशन ऑफ़ अमृता प्रीतम्स पिंजर।" इंटरनेशनल इंटरडिसिप्लिनरी जर्नल ऑफ़ आर्ट्स (IISJOA), जनवरी 2024, https://iisjoa.org/sites/default/files/iisjoa/Jan%202024/12.pdf।
6. "ए कम्पेरेटिव एनालिसिस ऑफ़ आरके नारायण्स 'द गाइड' एंड बॉलीवुड्स गाइड।" रेस्ट पब्लिशर, 2024, https://restpublisher.com/wp-content/uploads/2024/02/A-Comparative-Analysis-of-RK-Narayans-The-Guide-and-Bollywoods-Guide.pdf।
7. भट्ट, मनोज कुमार (मनोज लीला भट्ट), और सिसविजय सिंह राठौर। "भारतीय सिनेमा में साहित्यिक कृतियों के सिनेमैटिक प्रस्तुतिकरण की भूमिका और प्रभाव: विश्लेषणात्मक अध्ययन।" द एशियन थिंकर, 2026, https://theasianthinker.com/wp-content/uploads/2026/01/14.-भारतीय-सिनेमा-में-साहित्यिक-कृतियों-के-सिनेमैटिक-प्रस्तुतिकरण-की-भूमिका-और-प्रभाव.pdf।
8. "गोदान, द फ़िल्म: व्हाट इट रेप्लिकेट्स एंड व्हाट इट हाइड्स।" इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ ह्यूमैनिटीज़ एंड इनोवेशन (IJOHMN), 2019, https://ijohmn.com/index.php/ijohmn/article/view/107।
9. हचियन, लिंडा। ए थियोरी ऑफ़ एडेप्टेशन। सेकंड एडिशन, रूटलेज, 2013।
10. पॉवेल्स, हाइडी। इंडियन लिटरेचर एंड पॉपुलर सिनेमा: रीकास्टिंग क्लासिक्स। रूटलेज, 2007, https://dbcdharmapuri.edu.in/storage/media/heidi-pauwels.pdf।
11. साक्षी, और उषा पाठक। "हिन्दी उपन्यासों पर आधारित हिन्दी फिल्मों का अनुशीलन: 12th फेल उपन्यास के संदर्भ में।" इंटरनेशनल जर्नल फॉर मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च (IJFMR), खंड 7, अंक 4, जुलाई-अगस्त 2025, https://www.ijfmr.com/research-paper.php?id=51217।
12. संध्या। "प्रेमचंद के उपन्यास और उनका फिल्म रूपांतरण।" अपनी माटी, 30 सितंबर 2023, https://www.apnimaati.com/2023/09/blog-post_36.html।